© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 04 , Issue : 02 | January – March 2018

हिन्दी कहानियों में नारी की परिवारिक संघर्ष चेतना

डा. सुदेश कुमारी, हिन्दी प्राध्यापिका

घर परिवार वह धरातल है, जो व्यक्ति को समाज से जोड़ता है। घर–परिवार में आपसी सौहर्द्र–प्रेम के सूत्र में बंधकर पति–पत्नी एक अच्छे समाज की संरचना की ओर अग्रसर होते है परिवार की सार्वभौमिकता से कोई अपरिचित नहीं है। नारी और घर परिवार अन्तः–सम्बन्ध को निम्नलिखित चार बिन्दुओं का आधार बनाकर उद्घाटित किया जाएगा–

1. घर परिवार : अभिप्राय और महत्व।
2. घर परिवार का प्रथम रूप व नारी : अन्तःसम्बन्ध
3. एकल परिवार व नारी : अन्तःसम्बन्ध
4. नारी का अर्थोपार्जन एवम् घर परिवार पर उसका दुष्प्रभाव

1. घर परिवार : अभिप्राय और महत्त्व :– 'घर केवल चौतरफा दीवारों छज्जों और खिड़कियों का नाम नहीं होता–घर का अर्थ होता है–एक ऐसा स्थान जहां पारस्परिक स्नेह और सद्भाव का अविरल प्रवाह हो। किसी भी भ्रामक स्थिति के प्रवेश की जहां कोई गुंजाइश नहीं हो।'[1]

घर कितनी ही कोमल पवित्र मनोहर स्मृतियों को जागृत कर देता है।..... किशोरावस्था में घर माता–पिता, भाई–बहन, सखी–सहेली के प्रेम की याद दिलाता है, प्रौढ़ावस्था में गृहिणी और बाल–बच्चों के प्रेम की। यही वह लहर है जो मानव मात्र को स्थिर रखती है। उस समुद्र की वेगवती लहरों में बहने और चट्टानों के टकराने से बचाती है, यही वह मण्डप है जो जीवन की समस्त विघ्न–बाधाओं से सुरक्षित रखता है।'[2]

परिवार मानव समाज की प्राचीनतम एवं महत्त्वपूर्ण संस्था है। परिवार सामाजिक जीवन की प्रारम्भिक इकाई है। परिवार के क्रमशः विकास की संवेगात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति व सम्बन्धों की निकटता बनाने में समर्थ है। ''परिवार मानव की संवेगात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति सम्बन्धों की निकटता के कारण करने में समर्थ है।''[3] ''बिना परिवार के मानव जी ही नहीं सकता। कहा जा सकता है परिवार ही मानव के जीने के आधार होता है। रोटी खाने व कपड़ा पहनने के अतिरिक्त उसे बीबी, बच्चों उनके प्यार दुलार सच्चे–झूठे वायदों की भी आवश्यकता है। ''बिना परिवार के व्यक्ति के लिए समाज बेगाना ही नहीं बल्कि शत्रु भी हो जाता है और समाज के लिए वह व्यक्ति पथभ्रष्ट और लक्ष्यहीन विद्रोही हो जाता है।''[4]

2. घर–परिवार का प्रथम रूप व नारी : अन्तः सम्बध :– भारत में प्रथमतः संयुक्त परिवार होता था, जहां एक ही पीढी के दो–दो तीन–तीन पीढ़ियों का परिवार आत्मीयता व स्नेहपूर्वक रहता था। सयुक्त परिवार में नारी का स्वतन्त्र व्यक्तित्व नहीं था, वह आच्छन्न था, उद्घाटित नहीं हो पाता था। उसका काम सन्तान का पालन–पोषण और घर–गृहस्थी के कार्य को संभालना था। पुरूष बाहर जाता और आजीविका कमा कर लाता था। स्त्री–घर का प्रबन्ध करती थी।

परम्परागत संयुक्त परिवारों में स्त्रियों को निम्न स्तरीय प्राणी समझा जाता था। पत्नी और माता के रूप में उसका महत्त्व तो था लेकिन कोई स्वतन्त्र व्यक्तित्व नहीं था। पुरूष को स्त्री से उत्तम समझा जाता था। नारी जीवन अनेक विषमताओं से ग्रस्त था।''[5]

''परिवारिक और सामाजिक समस्त प्रथा और परम्परा, नियमों और कानूनों का भार सर्वप्रथम स्त्री पर ही लादा जाता था।... .....दूसरी ओर स्त्री भी इन सबको पूर्वजन्म के कर्मो के फल मानकर इससे सन्तुष्ट रहती थी।''[6]

3. एकल परिवार व नारी : अन्तःसम्बन्ध :– आधुनिक युग में जहां अनेक सुधार हुए, वहां आधुनिकता ने मानव को संयुक्त परिवार से एकल परिवार की ओर प्रेरित किया, जो समाज में एक क्रान्तिकारी घटना थी। फलस्वरूप परिवार छोटे हो गए और परिवार में व्यक्ति आत्मकेन्द्रित हो गया। नारी आर्थिक स्वतन्त्रता को पाकर आत्मनिर्भर हुई, जिससे पति का, पुरूष का एकाधिकार समाप्त होने लगा। बदली हुई परिस्थितियों में पत्नी पति के साथ कंधे से कन्धा मिलाकर चलने से परिवार में उसकी स्थिति सुदृढ़ हुई।

मातृत्व और पत्नीत्व (जो अभी तक नारी का पर्याय माना जाता रहा है) से नारी की भावना में पर्याप्त परिवर्तन आया है। अब नारी मातृत्व को सामाजिक अनिवार्यता के रूप में मानने लगी है, बजाए इसके कि वहां उसका सर्वस्व है। शिक्षा, राजनीति तथा सामाजिक स्वतन्त्रता के क्षेत्र में जब से नारी व्यक्तित्व की स्वतन्त्र सत्ता को लेकर प्रश्न उठने लगे हैं, तभी से पारिवारिक संगठनों के प्रति नारी के दृष्टिकोण में परिवर्तन दिखाई देने लगा है।''[7]

पत्नीत्व और मातृत्व के साथ और कहीं इनसे बढ़कर नारी की दृष्टि में निज व्यक्तित्व की प्रतिष्ठापना महत्त्वपूर्ण हो गई है और इस राह में यदि परिवार भी आड़े आते हैं तो आधुनिका उसको छोड़ते हुए सकुचाती नहीं। परिवार में रहकर भी वह अपना अस्तित्व तथा अस्मिता बनाए रखने का हर संभव प्रयत्न करती है। घर और बाहर दो मोर्चो पर कार्यरत स्त्री जब दोनों में समायोजन नहीं बिठा पाती तो परिवार में एक तनावपूर्ण स्थिति उत्पन्न हो जाती है। जिससे उसका मानस आहत होता है। ''आधुनिक युग में दाम्पत्य जीवन की विषमताओं को लेकर भी परिवार के प्रति नही नारी की मानसिकता में अन्तर आया है। पति–अपेक्षा, अधिकार–भावना, अविश्वास, कलह, नए और पुराने विचारों का संघर्ष पतिव्रत का एकांगी आदर्श इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कारण कहे जा सकते हैं जो परिवार के प्रति नारी में असहिष्णुता की भावना भरते हैं।''[8]

नारी को लेकर घर–परिवार में पति की मानसिकता चाहे परम्परागत हो लेकिन पति की सम्पत्ति में अधिकार मिलने से नारी की परिवार में स्थिति सुदृढ़ हुई है।

एक ओर जहां नारी ने नौकरी करने की सुविधा प्राप्त की है तो दूसरी ओर संतान पालन का कर्त्तव्य भी वह निभा रही है। उसने नारी के ऊपर परिवार में थोपे गए मिथक को समाप्त कर दिया है और सामान्य मानवी के रूप में पति के तुल्य समस्त अधिकारों को प्राप्त कर लिया है। कानूनी दृष्टि से घर परिवार में जहां उसकी स्थिति सुदृढ़ से सुदृढ़त्तर हुई है, वहं महिला संगठनों के द्वारा गरीबी, रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य जैसे मुद्दों को लेकर उसकी स्थिति को और भी अधिक मजबूत बनाने के लिए उठाए गए कदम न केवल घर परिवार में अपितु समाज में भी एक नई मिसाल कायम करेंगे।

परिवार में पारिवारिक बंधन अब नारी को इच्छित जीवन जीने से रोक नहीं पा रहे हैं, विवाह अब उसकी इच्छा का फल रह गया है। आधुनिक नारी केवल घर–परिवार में अपने व्यक्तित्व की प्रतिष्ठापना में लगी हुई है बल्कि पूरी निष्ठा के साथ बच्चों का लालन पालन करती–करती उन्हें उज्ज्वल भविष्य की ओर ले जाती है तथा साथ ही पति के प्रति अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह भी करती है। आज उसकी भूमिकाएँ अनेकाकार हो गई है। घर–परिवार और उससे जुड़ी उसकी सामाजिकता का दायरा भी विशाल हो गया है, जिसका निर्वाह भी वह पूरे प्राणापन से कर रही है। परिवार में उसका स्थान नगण्य नहीं अपितु महत्त्वपूर्ण हो गया है। 'आधुनिक परिवार ने चाहे कुछ भी हो परिवार में नारी के महत्त्व को स्वीकारा है। वह घरेलू काम करने वाली नौकरानी पति की दासी, बच्चों को जन्म देने वाली नहीं है, वह घर की स्वामिनी भी है।''[9]

4. नारी का अर्थोपार्जन एवं घर–परिवार पर उसका दुष्प्रभाव :– एक ओर जहां अर्थोपार्जन से परिवार में नारी की स्थिति सुदृढ़ हुई, उसके महत्त्व को स्वीकारा गया, वहां दूसरी ओर उसके घर से बाहर निकलने के कारण उसका दुष्परिणाम या दुष्प्रभाव बच्चों व पति की मनोदशा पर भी पड़ा है–''परिवार टूट रहे हैं, स्त्री पुरूष के आपसी रिश्ते कमजोर पड़ते जा रहे है, पुरूष और स्त्री दोनों ही एक दूसरे के सामने पुराने आदर्शो की दुहाई देते हैं और चूँकि मूल्य बदल रहे हैं। पुराने पैमाने निश्चित ही आज लागू नहीं किए जा सकते, मसलन जब स्त्री पुरूष दोनों ही काम पर जा रहे हैं तो निश्चित है कि स्त्री पुरूष को खाना खिलाते समय उस तरह से उसका ध्यान नहीं रख सकती.....बच्चों के लालन–पालन की सम्पूर्ण व्यवस्था ओढ़ने में भी वह अशक्त होती है, तकरार यहीं से आरम्भ होती है.....फलतः बच्चे पिसते है, उसकी प्रगति ताक पर रख दी जाती है परिवार धीरे–धीरे बिखरता चला जाता है और अंततः सम्पूर्ण टूट जाता है।''[10]

निष्कर्षतः घर–परिवार का प्रारम्भिक रूप–संयुक्त परिवार में नारी की महत्ता पुरूष से कम थी। धीरे–धीरे परिस्थितियां बदली। सयुक्त परिवार का स्थान एकल परिवार ने ले लिया और पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति व निजात की चाह लेकर नारी घर से बाहर निकली। अतएव उसकी परिवार में स्थिति सुदृढ़ हुई। नारी की निजता की चाह में पुरूष का अहम् आहत होने लगा। जिसके फलसवरूप परिवार में अशान्ति व तनाव की स्थिति भी व्यक्त होने लगी। इधर नारी घर और बाहर दोनों क्षेत्रों में समायोजन बैठाने का प्रयास करती है लेकिन कभी समायोजन न बैठाने के कारण परिवार में तनावपूर्ण स्थिति व उसकी संतान आहत होती है।

घ. स्त्री और पुरूष अन्तः सम्बन्ध :– स्त्री–पुरूष के सक्षम भावात्मक सम्बन्ध में 'सम्बन्ध' शब्द की सूक्ष्मता से परिचित होना आवश्यक है। ''सम्बन्ध स्कूली बच्चों द्वारा लिखा शब्द नहीं, जो बार–बार गलत लिखे जाने के बाद भी सरलतापूर्वक रबर से

मिटाकर दोबारा और तिबारा लिखा जा सकता है। यहां प्रश्न संशोधन और श्रुतिलेखन का नहीं बल्कि यहां भावनाओं की पहचान का है, जिसके प्रत्येक अक्षर जीवन के मेरूदण्ड के छल्ले हैं जो टूटे नहीं कि बिखरे और जीवन हो गया लुंज–पुंज।''[11]

स्त्री–पुरूष के सम्बन्धों पर आधारित यह दुनियां गतिमान है यही वह धरातल है, जहां से परिवार का स्वरूप बनता है। ''पुरूष और नारी के पारस्परिक सम्बन्धों में पति–पत्नी सम्बन्ध सर्वाधिक स्पृहणीय एवं आदर्श माना गया है। आदिकाल से ही स्त्री और पुरूष ने पारस्परिक आकषर्ण का अनुभव किया है और प्रायः सभी सभ्य समाजों में उन्होनें इसे विवाह सम्बन्ध स्वरूप के रूप में स्थायित्व प्रदान किया है।''[12] ''सारी सामाजिक व्यवस्था का प्राण, उसकी रूपरेखा का आधार समाज के प्रधान अंग, स्त्री तथा पुरूष का सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध ही है।''[13] ''स्त्री पुरूष के आपसी सम्बन्धों की धुरी पर ही दुनिया चल रही है। इसे बदला नहीं जा सकता।''[14]

यदि स्त्री पुरूष के सम्बन्ध मधुर हैं तो सारा परिवार सुखी रहता है अन्यथा परिवार में अशान्ति, कलह तनाव व उदासीनता का वातावरण बना रहता है। आवश्यकता है पति द्वारा पत्नी का प्यार, सम्मान व उसको उचित स्थान देने की। पुरूष ने स्त्री के महत्त्व व भूमिका को अविस्मृत नहीं किया होगा जैसा कि कहा गया है–''स्त्री–पुरूष के बीच नैतिक सम्बन्धों के मानकों के पालन में स्त्रियां नियमतः विशेषतः महत्त्वपूर्ण भूमिका करती आयी हैं। सम्भवतः नारी ने ही नैसर्गिक कामेच्छा को उस दिशा में मोड़ा, जिसमें बढ़ते हुए उदात्त प्रेम भावना बनी तथा तोमर, कालिदास, शैक्सपीयर और पुश्किन ने साफो जेब्र निस्तो और जर्ज सैड ने उसका स्तुतिगान किया।''[15]

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री–पुरूष सम्बन्धों को देखना समीचीन होगा–वैदिक युग में पत्नी रूप में नारी की स्थिति ऊंची थी। दोनों की सामाजिक स्थिति समान रूप से महत्त्वपूर्ण थी। उत्तर वैदिक काल में नारी का पूर्व प्रदत्त स्त्री, पुरूष समानतापूर्ण स्थान में गिरावट आई। उसका सम्मान कम हो गया। धर्मशास्त्र युग जिसमें मनुसमृति को व्यवहार की कसौटी पर माना गया पति स्त्री के लिए देवता हो गया। विवाह ही उसके जीवन का एकमात्र संस्कार है आदि विचारधाराओं ने जन्म लिया। स्त्रियां वस्तु बन गई। 'पति के प्रति अपने कर्त्तव्यनिर्वाह की अवहेलना पर उसको तिरस्कृत किया जाता (मृत्यु के अनन्तर) वह भेडिए के गर्भ में (मादा भेडिया) प्रवेश पाती। अपने पाप के लिए (सजा के रूप में) बीमारियां उसे घेर लेती।''[16] रामायण और महाभारत काल में भी उसका स्वतन्त्र व्यक्तित्व कुंठित है। सीता और द्रोपदी के उदाहरण हमारे सामने है।

मुगल साम्राज्य की स्थापना के पश्चात् स्त्री अपने अस्तित्व के लिए पूर्णतया पुरूष पर निर्भर हो गई। 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक नारी का लगभग शोषित रूप ही रहा। समाज सुधार को नारी संगठनों के प्रयासों के फलस्वरूप नारी में जागृति आई और स्त्री–पुरूष सम्बन्धों में धीरे–धीरे परिवर्तन आने लगा।

आधुनिक युग में स्त्री–पुरूष के सम्बन्धों में विशेष परिवर्तन हुआ है। नारी अब विवाह को ही अपने जीवन की परम आवश्यकता मानने को तैयार नहीं है। उसकी प्रथम आवश्यकता अपना जीवन–निर्माण और द्वितीय विवाह रट गई है। ''नारी विवाह में ही अपनी अस्मिता की इतिश्री मानने को तैयार नहीं है।''[17] अब वह पति को देवता नहीं सहचर सखा मानने लगी है और पति से अलग अपनी पहचान कायम करना उसकी महती ललक है। पति के नाम में अपने नाम को अन्तर्मुक्त नहीं करना चाहती। ''बदलते सामाजिक संदर्भ में नारी और पुरूष के सम्बन्धों में भी बदलाव आया है, बुद्धि और विवेक से संकलित नारी शक्ति अपनी सही पहचान बनाने के लिए अधिकाधिक जागरूक हो रही है।''[18]

पत्नी अब अपनी अस्मिता रखना चाहती है इसी कारण पति–पत्नी में शुरू में होता है तनाव जो धीरे–धीरे टूटन की ओर अग्रसर हो जाता है। आधुनिक होने पर भी उसकी मानसिकता में इस तरह का बदलाव आया है। पति के पुरूष होने का अहम पत्नी स्वतन्त्रय की राह में आड़े आता है–''आज का पुरूष चाहे कितना भी आधुनिक क्यों न हो गया हो किन्तु पत्नी के रूप में उसकी कल्पना किसी अंश में उस परम्परागत मूल्य से अवश्य जुड़ी होती है, जिसमें पत्नी, पति की पूर्व अनुगता बनकर आती है। वैचारिक धरातल पर वह चाहे उसका विरोध करता हो किन्तु व्यवहार रूप में भर उठता है।''[19] आज पति–पत्नी सम्बन्धों की कटुता ने तलाक को बढ़ावा दिया है। जिसने जहां पति–पत्नी को दो किनारों पर लाकर खड़ा कर दिया है, वहां संतान उसके दुष्परिणामों से अधिक प्रभावित हुई है।

वैवाहिक धरातल पर विवाह संस्था की निस्सरिता को व्यक्त किया जाने लगा है। अधुनिक पत्नी यह महसूस करती है कि केवल शारीरिक धरातल पर ही पति–पत्नी में तादात्मय जरूरी नहीं अपितु मानसिक धरातल पर भी तादात्मय जरूरी है। जहां ऐसा नहीं होता, वहां विवाह संस्था असफल सिद्ध होने लगी हैं। ''नारी शरीर ही नारी की संज्ञा को सार्थक नहीं करता। उसके मन की कोमल अनुभूतियाँ भी उसकी परिचायक होती हैं। पुरूष उसकी मानसिक अनुरूपता तक पहुंचे बिना शारीरिक स्तर पर ही उसे भोग

का साधन बना डालता है तो नारी का हृदय अथाह वेदना से भर उठता है।''[21] ''औरत का मन कोई चीज है नहीं जानते पर उसके तन को भोगेंग और भोगने के बाद लात मारकर ठेल देंगे।''[20]

भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों में विश्वास करने वाली नारी जहां अपने सतीत्व को हर सीमा में बनाए रखना चाहता है पति की अनुचित बात को भी सहन करती है। यहां ऐसी नारियां भी है जिसमें स्त्री पुरूष सम्बन्ध में यौन–भावना को लेकर भी अन्तर आया है। शरीर की पवित्रता को लेकर उसकी प्रवृति बदली है। ''शारीरिक पवित्रता की दकियानूसी धारणा किशोर संकोच की अनुपस्थिति आज मन में कोई पाप नहीं जगाती। यौन मुक्ति भी उसे अपने अस्तित्व के अधिकार की एक मौलिक आवश्यकता लगती है और इसे वह चारित्रिक शील के साथ जोड़ना भी पसन्द नहीं करती।''[22]

दूसरी ओर पत्नी, पति–पत्नी के यौन–सम्बन्धों में भी अपनी इच्छा को भी महत्त्व देने लगी है–''नारी अब पति पत्नी के यौन–सम्बन्धों में भी अपनी इच्छा को महत्त्व देना चाहती है। नारी अब यह मानने लगी है कि पति का पत्नी के शरीर को भोगने का अधिकार है लेकिन जब वह पत्नी की इच्छा के विरूद्ध कुछ करता है तो सुख की स्थिति न रहकर बलात्कार बन जाता है।''[23]

पति की शारीरिक अशक्तता पत्नी का पर–पुरूष की ओर आकर्षित करने लगती है। परामपरागत पत्नी की लज्जा, त्याग, सतीत्व की भावना में कमी आई है। दाम्पत्य जीवन में बंधी पत्नी कुछ समय के लिए अन्य पुरूष के संसर्ग में रहकर कुछ नया करने व पाने को लालायित हुई है। ''किसी सीमा तक पुरूष से मुक्ति चाहती है ताकि उसकी प्रगति में बाधा न बने।''[24]

अत्यधिक महंगाई और व्यक्तित्व की ललक ने नारी को जब घर से बाहर अर्थोपार्जन के क्षेत्र में ला खड़ा किया तो उसके पति–पत्नी के मधुर सम्बन्धों में कुछ बदलाव आया है। कहीं पति में संदेह के बीजों का अंकुरन हुआ है तो कहीं पत्नी की क्रान्तिकारी भूमिका के कारण उसके अहम् को ठेस लगी है। ''वैचारिक भिन्नता, शैक्षणिक अन्तर आया की असमानता कार्य क्षेत्रों मे अन्तर के कारण परिवार में पति–पत्नी के सम्बन्धों में बदलाव एंव विघटन हुआ है। आर्थिक स्वावलम्बन ने नारी को आत्मनिर्भर बनाया है।''[25]

''नारी–पुरूष के आपसी सम्बन्धों में सहजता बनाए रखने के लिए नारी की परिवर्तित मानसिकता के प्रति उचित दृष्टिकोण अपनाते हुए भी अपनी मानसिकता में परिवर्तन की आवश्यकता है। अन्यथा नारी–पुरूष में सहयोग से सुगठित सामाजिक इकाई के निर्माण में''[26]

इधर डॉ. पुष्पा बंसल का मानना है कि बदलती परिस्थितियों में नारी के प्रति पुरूष के दृष्टिकोण में बहुत परिवर्तन आया है। ''बदलते सामाजिक सदर्भो में नारी पुरूष के आपसी सम्बन्धों मे बहुत बदलाव आ चुका है। आज का पुरूष नारी के प्रति अधिक अंडर स्टैण्डिंग हो गया है। आन्दोलनों से जुडी एक्टीविस्ट नारियों के साथ समस्या यह है कि वे इस तथ्य को स्वीकारना ही नहीं चाहती।''[27]

निष्कर्षतः वैदिक युगीन स्त्री पुरूष अन्तः सम्बन्धों से लेकर अत्याधुनिकता स्त्री–पुरूष सम्बन्धों में पर्याप्त अन्तर आया है। पति के प्रति पूर्णरूपेण समर्पित व आश्रित नारी पति–पत्नी सम्बन्धों में बंध कर भी अपनी अस्मिता चाहती है। विवाह को लेकर उसकी मानसिकता परिवर्तित हुई है। पति के प्रति अपेक्षित कर्त्तव्य–निर्वाह को वह विवेक की तुलना पर तोलने लगी है। दाम्पत्य सम्बन्धों में मधुरता के स्थान पर कटुता भी घर करने लगी है। कारण है कि पत्नी का अपने पति सुलभ अहम् व स्वभाव में कमी व परिवर्तन का न आना।

सन्दर्भ सूची :–

1. ऋता शुक्ला, उद्धृत रेणुका नैयर की पुस्तक, नारी स्वातन्त्रय के विभन्न रूप पृ. 164
2. गृहदाह (कहानी) उद्धृत, प्रेमचन्द का नारी संसार, पृ. 118
3. रेणुका नैयर, नारी स्वातन्त्र्य के विभिन्न रूप, पृ. 28
4. राजेन्द्र यादव, एक दुनिया समानान्तर, पृ. 31
5. शशि के जैन, भारतीय समाज, पृ. 224
6 रेणुका नैयर, नारी स्वातन्त्र्य के विविध रूप, पृ. 28
7. डा. विमल शर्मा, साठोतर हिन्दी उपन्यासों मे नारी के विविध रूप. पृ. 42
8. डा. विमल शर्मा, साठोतर हिन्दी उपन्यासों में नारी के विविध रूप. पृ. 44
9. डा. ज्ञानवती अरोड़ा, समसामयिक हिन्दी कहानी में बदलते पारिवारिक सम्बन्ध, पृ. 102
10. शशि प्रभा शास्त्री, उद्धृत रेणुका नैयर की पुस्तक, नारी स्वातन्त्र्य के विभिन्न रूप, पृ. 155
11. नासिरा शर्मा. शल्मती. पृ 148
12. गीता लाल, प्रेमचन्द्र का नारी चित्रण, पृ. 56

13. महादेवी वर्मा श्रृंखला की कड़ियां, पृ. 108

14. डॉ. देवेश ठाकुर, कथा वर्ष 1947 उद्धृत–शीला राजवार की पुस्तक, स्वतन्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य में नारी के बदलते संदर्भ पृ 134

15. युलि आन ब्रोमलेय, रोमान पादोल्ली पृ. 250 अनुवादक योगेन्द्र नागपाल

16. By violating the duty towards her husaond a wife is disgraced in this world (after death) she. Enters the womb of a Jackal and is tormented by dineases (the punishment) of her sin-susan wadly. taken from the brok women in indian Society-Edited by Rehana Ghadially. P. 30.

17. शील राजवार, स्वातन्त्र्योत्तर, हिन्दी कथा साहित्य में नारी के बदलते संदर्भ, पृ. 136

18. ऋता शुक्ल, उद्धृत रेणुका नैयर की पुस्तक, नारी स्वातन्त्र्य के विभिन्न रूप, पृ165

19. रेणुका नैयर, नारी स्वातन्त्र्य के विभिन्न रूप, पृ. 87

20. डा. विमल शर्मा, साठोतर हिन्दी उपन्यासों मे नारी के विविध रूप. पृ. 101

21. रामदरश मोहन, जल टटता हुआ, पृ. 130

22. नरेन्द्र मोहन, उद्धृत रामदरश मिश्र की पुस्तक हिन्दी कहानी दो दशक की यात्रा पृ. 128

23 रेणुका नैयर की पुस्तक, नारी स्वातन्त्र्य के विभिन्न रूप पृ. 102

24 सुषमा बेदी, दैनिक ट्रिब्यून 8 जनवरी 1995, पृ. 14

25 डॉ. गणेशदत्त स्वातंयोत्तर हिन्दी कहानी में नारी के विविध रूप, पृ. 160

26. डा. विमल शर्मा, साठोतर हिन्दी उपन्यासों मे नारी के विविध रूप. पृ 346

27. रेणुका नैयर, नारी स्वातन्त्र्य के विभिन्न रूप पृ. 160